P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9* May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

राज्यपाल की शक्तियों तथा पद का दोहरा स्वरूप

रमा शर्मा
सह आचार्य,
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय कला महाविद्यालय
कोटा, राजस्थान, भारत

सारांश

भारतीय संघीय शासन व्यवस्था वाला देश है। हमारे देश में संविधान द्वारा शासन सत्ताका विभाजन केन्द्र सरकार व राज्य सरकार के मध्य किया गया है। इसके साथ–साथ संसदात्मक शासन भी अपनाई गई है, जिसमें नाममात्र की एवं वास्तविक कार्यपालिका का अन्तर पाया जाता है। केन्द्र में कार्यपालिका का नाममात्र प्रधान व राष्ट्रपति होता है जबकि राज्यों की कार्यपालिका शक्ति राज्यपाल में निहित है। राज्यपाल जो कि राज्य शासन का प्रमुख पदाधिकारी है उसको संविधान के द्वारा विशेष महत्व प्राप्त है अनेक विशिष्ट शक्तियां उसको राज्य शासन के विरूद्ध प्रदान की गई है। संघीय शासन व्यवस्था में राज्यपाल का पद अपनी ओर से क्या भूमिका कितनी प्रभावकारी या विवाद को उत्पन्न करने वाली है।

मुख्य शब्द : संघीय शासन, संवैधानिक प्रधान, राज्यपाल, पदस्थिति, मन्त्रिपरिषद, वैधानिक अध्यक्ष, नाममात्र का अध्यक्ष, विवेकाधीन शक्तियां, परामर्शदाता, अभिकर्ता, स्वविवेकीय, विधानमण्डल, सिफारिश, पदच्युत, विघटन, केन्द्र सरकार, राज्य सरकार।

प्रस्तावना

भारतीय संविधान के अनुच्छेद–1 के अनुसार संघीय शासन व्यवस्था को अपनाकर संसदात्मक कार्यपालिका वाली व्यवस्था को लागू किया गया है। राज्य की कार्यपालिका शक्ति का प्रधान राज्यपाल होता है, जिसके पास नाममात्र शक्तियों से अधिक शक्तियां प्राप्त है, जो कि विभिन्न परिस्थतियों में भिन्न–भिन्न प्रकार से प्रयोग में लाई जाती रही है। इसी कारण से राज्यपाल का पद एक अध्ययन का विषय बन गया है जो कि संघ के सन्दर्भ में राज्य के शासन को कितना प्रभावित करता है या नहीं। लोकप्रिय सरकारों के कार्यो के प्रति राज्यपाल का दृष्टिकोण क्या रहता है, संवैधानिक प्रमुख का या केन्द्र के प्रतिनिधि का।

समस्या का चयन

केन्द्र राज्य सम्बन्धों में राज्यपाल का दृष्टिकोण निरन्तर विवाद का प्रश्न रहा है, प्रमुखतः जो उन्हें स्वविवेक की शक्तियां प्रदान की गई है, उनके कारण उसकी भूमिका में बदलाव आ जाता है, जिसका राज्य सरकारें निरन्तर विरोध करती रही है। हमारा उद्देश्य यह देखना है कि संघ के सन्दर्भ में राज्यपाल की शक्तियां तथा पद का दोहरा स्वरूप क्या है ? क्या वह संविधान सम्मत तरीके से अपने दायित्व का निर्वाह करके स्वस्थ संघीय शासन को बढावा दे रहे है।

अध्ययन का उद्देश्य

संघशासन में केन्द्र–राज्य सम्बन्धों के प्रमुख तत्व राज्यपाल व पद की भूमिका, शक्तियां एवं पद के दोहरे स्वरूप का अध्ययन करना है, हमे यह देखना है कि राज्य के शासन प्रमुख राज्यपाल के कार्यो से केन्द्र–राज्य सम्बन्धों में क्या तनाव आ रहा है।

साहित्यावलोकन

राज्यपाल व भारतीय संविधान विषय पर अनेक अध्ययन हुए है। इनमें से उपलब्ध साहित्य का अवलोकन व अध्ययन किया है। अनुसंधान के क्षेत्र में पुस्तके, समाचार–पत्र पत्रिकायें आदि का अध्ययन किया है। एम0वी0 पायली, ''कान्स्टीट्यशन गर्वन्मेन्ट ऑफ इण्डिया, धैय एम0एस0 ''ऑफिस ऑफ दी गर्वनर इन इण्डिया'', शर्मा तथा यादव ''केन्द्र–राज्य सम्बन्ध, डा0जे0आर0 सिवाच ''राज्यपाल का पद'' वी.के. सिंह, गवर्नरनेन्स एण्ड दी गवर्नर (2018), दुबे अनिल, प्रेसिडेन्शल, टेकआवर ऑफ स्टेट गर्वन्मेन्ट (2017), एम.पी. सिंह, आउटलाईन ऑफ इण्डियन लिगल एण्ड कान्स्टीट्यशनल हिस्ट्री (2017) का इन अध्ययनों के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि राज्यपाल का पद व उसकी भूमिका का दोहरा स्वरूप हमारी संघीय शासन व्यवस्था को प्रभावित करता है।

शोध प्ररचना

उपरोक्त अध्ययन में मुख्यतः द्वितीय स्त्रोतों का सहारा लिया गया है। वर्णनात्मक व विश्लेषणात्मक तरीके से समस्या को आगे लाने का प्रयास किया गया है।

संविधान के द्वारा राज्यपाल को पर्याप्त व्यापक शक्तियां प्रदान की गई है। राज्यों के राज्यपाल की वही स्थिति है जो केन्द्र में राष्ट्रपति की है। दुर्गादास बसु के अनुसार राज्यपाल की शक्तियां राष्ट्रपति के समान है, सिर्फ कूटनीतिक, सैनिक तथा संकटकालीन अधिकारों को छोड़कर संविधान लागू होने के बाद आज तक भी अनेक कारणों से राज्यपाल के पद का भी संस्थाकरण नहीं हो पाया है। राज्यपाल की शक्तियां इस प्रकार है :–

कार्यपालिका शक्तियां

राज्य की समस्त कार्यपालिका शक्तियां राज्यपाल में निहित है, जिन्हे स्वयं या अधीनस्थ पदाधिकारियों द्वारा संपादित करता है। मुख्यमंत्री तथा उसके परामर्श पर अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति करने के साथ ही राज्य सरकार के अन्य प्रमुख अधिकारियों की भी नियुक्ति करता है। राज्य सरकार के कार्य के सम्बन्ध में वह नियमों का निर्माण करता है।

विद्यायी शक्तियां

राज्यपाल राज्य की व्यवस्थापिका का एक अविभाज्य अंग होता है। वह व्यवस्थापिका के अधिवेशन बुलाता है, स्थगित करता है तथा निम्न सदन को विघटित भी करता सकता है। राज्य विधानमण्डल द्वारा पारित विधेयक पर उसकी स्वीकृति आवश्यक है। व्यवस्थापिका का अधिवेशन न होने की अवधि में अध्यादेश जारी कर सकता है।

वित्तीय शक्तियां

राज्य विधानमण्डल के राज्यपाल की पूर्व स्वीकृति के बिना कोई भी धन विधेयक प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है। राज्य वह बजट पेश करता है। राज्य की संचित निधि राज्यपाल के ही अधिकार में ही निहित होती है।

न्यायिक शक्तियां

संविधान के अनुच्छेद 161 के अनुसार जिन विषयों पर राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार होता है, उन विषयों सम्बन्धी किसी विधि के विरूद्ध अपराध करने वाले व्यक्तियों के दण्ड को राज्यपाल कम कर सकता है, स्थगित कर सकता है वह क्षमता कर सकता है।

विविध शक्तियां

1. वह राज्य लोक सेवा आयोग का वार्षिक प्रतिवेदन तथा राज्य के आय–व्यय के सम्बन्ध में महालेखा परीक्षक का प्रतिवेदन प्राप्त करता है, तथा उन्हें विधानमण्डल के समक्ष प्रस्तुत करता है।
2. यदि राज्य का प्रशासन संविधान के अनुसार चल नहीं रहा है तो वह राष्ट्रपति को राज्य में संविधानिक यन्त्र की विफलता के सम्बन्ध में सूचना देता है तथा उसके प्रतिवेदन पर राज्य में राष्ट्रपति के अभिकर्ता के रूप में कार्य करता है।

राज्यपाल की स्थिति या भूमिका

इस सम्बन्ध में दो विरोधी दृष्टिकोण प्रचलित रहे है। इनमें से प्रथम में राज्यपाल को राज्य का केवल संवैधानिक अध्यक्ष माना गया है लेकिन द्वितीय में इस बात पर अधिक बल दिया गया है कि राज्य के प्रशासन में राज्यपाल की भूमिका एक संवैधानिक अध्यक्ष की अपेक्षा बहुत अधिक महत्वपूर्ण है। वास्तविक स्थिति के अध्ययन के लिए इन दोनों दृष्टिकोणों का अध्ययन उचित होगा।

राज्यपाल संवैधानिक प्रदान के रूप में

केन्द्रीय शासन व्यवस्था में राष्ट्रपति की स्थिति सांविधानिक अध्यक्ष की होती है, उसी तरह की स्थिति राज्यों में राज्यपाल की है। चूंकि भारतीय संघ तथा उसकी इकाइयों में संसदीय शासन की स्थापना की गई है। अतः सामान्य स्थिति में राज्यपाल मंत्रिपरिषद के परामर्श पर ही कार्य करेगा। वह राज्य का वैधानिक अध्यक्ष है, उसकी शक्तियां वास्तविक नहीं है।

डा0 अम्बेडकर ने संविधान सभा में कहा कि उन सिद्धान्तों के अनुसार जिन पर राज्यों का शासन आधारित है, राज्यपाल को प्रत्येक कार्य में मंत्रिपरिषद की सलाह आवश्यक रूप से माननी होगी। श्री ए.के. अय्यर ने भी इस विचार का समर्थन करते हुए कहा है कि राज्यपाल केवल एक सांविधानिक अध्यक्ष ही है। राज्यपाल की नियुक्ति के प्रकार से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारे संविधान निर्माता उसे वैधानिक प्रधान ही बनाना चाहते थे, वास्तविक प्रधान नहीं है।

सुनील कुमार बोस बनाम मुख्य सचिव पश्चिम बंगाल सरकार के विवाद में निर्णय देते हुए कलकत्ता उच्च न्यायालय ने भी राज्यपाल की स्थिति संवैधानिक प्रधान की बताई है। इसलिए उसे अपने मंत्रियों की सलाह से ही कार्य करना चाहिए।

राज्यपाल के पद पर कार्य कर चुके विभिन्न व्यक्तियों ने अपनी पदास्थिति के विषय में जो कुछ कहा है, उससे भी यह आभास मिलता है कि राज्यपाल एक संवैधानिक अध्यक्ष है, जिसे अपने सभी कार्य मंत्रिपरिषद के परामर्श के अनुसार करने होते है, इसलिए उनेक राज्यपाल अपने आपको अवांछित अनुभव करते थे। राज्यपाल के पद पर रहते हुए भी श्री प्रकाश ने भी इस प्रकार की राय अभिव्यक्त की थी। सरोजनी नायडु ने अपने आपको सोने के पिंजरे में बन्द चिड़िया बताया था, महाराष्ट्र की भूतपूर्व राज्यपाल श्रीमती विजयमक्ष्मी पण्डित ने कहा था कि, ''यदि कोई व्यक्ति इस पद को स्वीकार करता है तो उसको पद का नहीं, वरन वेतन का आकर्षण है''

सांवैधानिक अध्यक्ष से अधिक

प्रथम व दृष्टिकोण में राज्पाल को केवल संवैधानिक प्रधान बतलाया गया है, लेकिन यदि राज्यपाल की स्थिति का विस्तृत अध्ययन किया जाय तो यह धारणा असत्य हो जाती है। राज्यपाल को एक वैधानिक अध्यक्ष मात्र मानना भूल होगी, वास्तव में देखा जाय तो वह एक संवैधानिक अध्यक्ष मात्र तो है ही, इससे भी अधिक कुछ है। इस दृष्टि से हमारे द्वारा राज्यपाल पद का अध्ययन दो रूपों में किया जाना चाहिए।

प्रथम

सवंधान निर्माता राज्यपाल को क्या भूमिका देता चाहते थे।

द्वितीय

राज्यपाल पदधारी व्यक्तियों ने विभिन्न परिस्थितियों में क्या भूमिका निभायी है ?

संविधान सभा के वाद–विवादों के अध्ययन से यह नितान्त स्पष्ट हो जाता है कि संविधान निर्माताओं की धारणा के अनुसार सामान्य परिस्थतियों में राज्यपाल एक संवैधानिक अध्यक्ष के रूप में कार्य करेगा, लेकिन विशेष परिस्थितियों मे उसकी भूमिका अधिक महत्वूपर्ण हो सकती है।

राज्य शासन में उसकी शक्तियां वास्तविक न होते हुए भी राज्य शासन में उसका स्थान सबसे अधिक सम्मानित व प्रतिष्ठित होता है। राज्य की राजनीति से ऊपर होने के कारण निष्पक्ष होता है, और राज्य के वास्तविक शासक सदैव ही आवश्यकता के अनुसार उनसे मन्त्रणा प्राप्त कर सकते है। अपने निर्दलीय व्यक्तित्व के आधार पर राज्यपाल राज्य के शासन की ढुलमुल और अस्थायी राजनीति में स्थायित्व और स्थिरता लोने की स्थिति में होता है। यदि राज्यपाल प्रभावशाली व्यक्तिव वाला और कार्यशील व्यक्ति होतो वह विरोधी पक्ष और मंत्रिमण्डल के मध्य अनेक मतभेदों को दूर करने में सहायक सिद्ध हो सकता है। राज्य के शासन को सुगम, सुचारू व कार्यशील बनाने में राज्यपाल का बहुत अधिक महत्व होता है। एम0बी0 पायली के अनुसार, राज्यपाल मंत्रिमण्डल का सुझबूझ वाला परामर्शदाता है जो राज्य की अशान्त राजनीति में शान्त वातावरण पैदा कर सकता है। वह राज्य में राष्ट्रपति का अभिकर्ता और संघ सरकार का प्रतिनिधि है। वह एक कड़ी है, जो संघ तथा राज्य सरकार को जोड़ता है और संघ तथा राज्य के सम्बन्धों को निर्धारित करता है। वह सांविधानिक यन्त्र का एक आवश्यक अंग है जो एक आवश्यक उद्देश्य की पूर्ति करता है तथा एक आवश्यक सेवा प्रदान करता है।

राज्यपाल की स्वविवेक शक्तियां

राज्यपाल की स्वविवेक शक्तियों के दो रूप है –

1. संविधान प्रदत्त स्वविवेक शक्तियां।
2. परिस्थिति जन्य स्वविवेक शक्तियां।

संविधान प्रदत्त स्वविवेक शक्तियां

इसका अभिप्राय उन शक्तियों से है, जिनके प्रयोग के सम्बन्ध में राज्यपाल को स्वविवेक में निर्णय लेने का अधिकार संविधान द्वारा ही दे दिया गया है। यह संविधान के अनुच्छेद 163(1) तथा (2) की शब्दावली से स्वयं स्पष्ट है–

अनुच्छेद 163(1)

जिन बातो में इस संविधान द्वारा या इसके अधीन राज्यपाल से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपने कृत्यों अथवा उनमें से किसी को स्वविवेक से करे, उन बातों को छोड़कर राज्यपाल को अपने कृत्यों का निर्वहन मुख्मयंत्री होगा।

अनुच्छेद 163(2)

यदि कोई प्रश्न उठता है कि कोई विषय ऐसा है कि जिसके सम्बन्ध में इस संविधान के द्वारा या अधीन राज्यपाल के अपेक्षित है कि स्वविवेक से कार्य करे तो राज्पाल का स्वविवेक से किया हुआ निश्चिय अन्तिम हेगा तथा राज्यपाल द्वारा की गई किसी बात की मान्यता पर इस कारण से कोई आपत्ति नहीं की जायेगी कि उसे स्वविवेक से कार्य करना या नहीं करना चाहिए था।

अनुच्छेद 160

अनुच्छेद 160 में उल्लेख है कि ''इस अध्याय (संवधिान के भाग–6 का अध्ययन–2 कार्यपालिका सम्बन्धी) में उपबन्ध न की हुई किसी आकस्मिकता में राज्यपाल के कृत्यों के निर्वहन के लिए राष्ट्रपति जैसा उचित समझे वैसा उपबन्ध बना सकेगा, स्पष्ट है कि राष्ट्रपति ऐसे उपबन्धों का निर्माण कर सकता है, जिनमें राज्यपाल को स्वविवेक शक्तियों के प्रयोग के अधिक अवसर मिल सकें।

असम के राज्यपाल को जन जातियों वाले क्षेत्रों के प्रशासन के सम्बन्ध में विवेकीय शक्तियां प्राप्त है। नागालैण्ड के राज्यपाल को विरोधी नागों की हिंसात्मक कार्यवाहियों से निपटने के लिए विशेष उत्तरदायित्व सौपे गये है, जिनमें वह अपने विवेक का प्रयोग कर सकता है। इसी प्रकार सिक्किम के राज्यपाल को राज्य में शान्ति व सभी क्षेत्रों के लोगों के सामाजिक व आर्थिक कल्याण के लिए विशेष उत्तरदायित्व सौपे गये है। इसके अतिरिक्त राज्यपाल मुख्यमंत्री के विधायनी तथा प्रशासकीय मामलों पर सूचना मांग सकता है। वह मुख्यमंत्री को किसी ऐसे विषय को मंत्रीमण्डल के सम्मुख विचारार्थ प्रस्तुत करने के लिए बाध्य कर सकता हे, जिसके सम्बन्ध में मंत्रीमण्डल ने पहले निर्णय लिया हो। व्यवस्थापिका द्वारा पारित किसी भी विधेयक को पुनः विचार के लिए लौटा सकता है। कुछ विशेष मामलों से सम्बन्धित विषयों पर अध्यादेश जारी करने से पूर्व राष्ट्रपति से निर्देश प्राप्त कर सकता है। राज्य विधानमण्डल द्वारा पारित विधेयकों को राज्यपाल राष्ट्रपति की अभिस्वीकृति के लिए भेज सकता है।

परिस्थतिजन्य स्वविवेक शक्तियां

राज्यपाल के कतिपय स्वविवेकीय शक्तियां कुछ विशेष परिस्थतियों में ही प्राप्त होती है, यह विशेष परिस्थतियां निम्नलिखित हो सकती है :–

1. किसी एक दल को विधानसभा में स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो।
2. मिली–जुली सरकार का होना और उनमें आपसी फूट का बने रहना।
3. जिस दल की सरकार है उसके कुछ सदस्य उस दल से निकलकर किसी दूसरे दल में मिल जाये और उस सरकार के अस्तित्व को खतरा उत्पन्न हो जाये।
4. राज्य में शान्ति और व्यवस्था को संकट उत्पन्न हो गया हो आदि।

इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखना चाहिए कि परिस्थतियों से उत्पन्न स्वविवेकीय शक्तियों का प्रयोग करते समय सुनिश्चित प्रजातान्त्रिक अभिसमयों का सहारा लिया जाना चाहिए।

दुर्गादास बसु तथा सीतलवाड़ ने कुछ स्वविवेकी कार्य निभाये है :–

1. मुख्यमंत्री की नियुक्ति।

2. मंत्रीमण्डल को अपदस्थ करना।
3. विधानमण्डल का अधिवेशन बुलाना, तथा
4. विधानसभा भंग करना।

राज्यपाल की स्वविवेकीय शक्तियोंके प्रयोग के अवसरों को डा0एम0बी0 पायली ने निम्नानुसार बताया है।

1. मंत्रीपरिषद की स्थापना से पूर्व मुख्यमंत्री का चुनाव।
2. मंत्रीमण्डल को पदच्युत करना।
3. विधानसभा का विघटन करना।
4. मुख्यमंत्री से प्रशासनिक तथा विधायी कार्यो के सम्बन्ध में सूचना मांगना।
5. किसी एक मंत्री द्वारा किऐ गए निर्णय को मन्त्रिमण्डल के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत करने के लिए मुख्यमंत्री को आदेश देना।
6. विधान मण्डल द्वारा पारित किसी विधेयक को अभिस्वीकृति न देकर उसे पुनर्विचार के लिए लौटा देना।
7. राज्य विधान मण्डल द्वारा पारित किसी विधेयक को राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए योजना।
8. किसी अध्यादेश को प्रख्यात करने से पूर्व राष्ट्रपति के अनुदेश की याजना करना।
9. राष्ट्रपति को आपात परामर्श देना तथा।
10. असम तथा अन्य पूर्ववर्ती राज्यों के राज्यपाल के लिए आदिम जाति क्षेत्रों की कुछ प्रशासनिक समस्याओं को हल करना असम राज्य जिला परिषदों के खनिज स्वामित्व सम्बन्धी विवादोंका निर्णय।

इस सम्बन्ध में सर्वोच्च न्यायालय शमशेर सिंह बनाम पंजाब राज्य में निर्णय दिया है कि निम्न कार्य राज्यपाल अपने स्वविवेक से करेगा –

1. अनुच्छेद 371 क(1) ख और घ तथा 2(ख) और (च) के सम्बन्ध में।
2. सारणी छः पैरा 9(2) और 18(3) के सम्बन्ध में।
3. अनुच्छेद 356 के सम्बन्ध में जल राज्य में राष्ट्रपति शासन प्रवर्तित करने की सिफारिश राष्ट्रपति से करें।
4. अनुच्छेद 239 के सम्बन्ध में।
5. अनुच्छेद 200 के सम्बन्ध में जन राज्यपाल कोई विधेयक राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित रखता है।

प्रमुख रूप से 1967 के चतुर्थ आम चुनावों पश्चात् से ही इस प्रकार के अवसर उत्पन्न हुए जब राज्यपालों को परिस्थितिजन्य स्वविवेकीय शक्तियों का प्रयोग करना पड़ा। इस शक्तियों के प्रयोग के अध्ययन से यही निष्कर्ष निकलते है कि कुछ राज्यपालों ने तो सुनिश्चित अभिसमयोंका पालना किया तथा कुछ ने नहीं किया। दूसरी और कुछ मुख्यमंत्रियों ने भी प्रजातांत्रिक अभिसमयों का पालन किया तथा कुछ ने उल्लंघन किया।

अपनी विवेकीय शक्तियों को प्रयोग करते हुए राज्यपालें ने राज्य प्रस्तावों को राष्ट्रपति के हस्ताक्षरों हेतु आरक्षित किया है। राज्य मंत्रिमण्डलों को निर्देश दिया है वह राज्य विधान मण्डलों की बैठके बुलाये तथा केन्द्र को राज्य के मामलों की रिपोर्ट (जैसा केन्द्र चाहता था) भेजी है, ऐसी सभी विवेकीय कार्य राज्यपाल को प्राप्त स्वविवेकीय शक्तियों के अतिरिक्त है, जिन्हें राज्यपाल राष्ट्रपति शासन के दौरान कर सकता है। अतः स्पष्ट है कि राज्यपाल संघीय सरकार के सेवक तथा प्रतिनिधि होते है। राज्यों की राजनीति में उनका हस्तक्षेप संघात्मक सम्बन्धों के प्रतिकूल समझा जाता है।

राज्यपाल की भूमिका से उत्पन्न सभी मतभेद लगातार गिरते राजनीतिक सिद्धान्तों व व्यवहारों के पीछे मूल कारण है जो हमें भिन्न राज्यों में सर्वदलीय मंत्रिमण्डलों, अन्तर राज्य दलीय तनावों व दल बदलने की क्रियाओं तथा राजनीतिक दलों की असंख्यक टुकडियों के रूप में दिखाई देते है।

उपरोक्त तथ्यों से नितान्त स्पष्ट है कि यद्यपि राज्यपाल को राज्य की कार्यपालिका या वास्तविक प्रधान नहींकहा जा सकता, लेकिन इसके साथ ही वह केवल नाममात्र का अध्यक्ष नहीं है। यह एक ऐसा पदाधिकारी है जो राज्य के शासन में महत्वपूर्ण रूप से भाग ले सकता है।

राज्यपाल की दोहरी भूमिका

राज्यपाल को दोहरी भूमिका निभानी होती है– (1) राज्य सरकार के अध्यक्ष के रूप में और (2) राज्य में संघीय सरकार के अभिकर्ता के याथ प्रतिनिधि के रूप में।

राज्यपाल से यह आशा की जाती है कि वह इन दोनों भूमिकाओं में एक न्याय संगत संतुलन स्थापित करने का प्रयास करेगा।

उसकी दोहरी भूमिका में कोई विरोध नहीं है। राज्यपाल की केन्द्र के प्रतिनिधि की भूमिका वहां से प्रारम्भ होती है, जहां उसकी राज्य के अध्यक्ष की भूमिका समाप्त होती है। व्यवहार में इस प्रकार की स्थिति को स्पष्ट रूप से रेखाबद्ध नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्त होता है, तथा केन्द्र द्वारा उस पर प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डाला जाता है।

राज्यपाल की केन्द्रीय सरकार के प्रतिनिधि के रूप में भूमिका

संविधान निर्माता भारत में एक ऐसी संघीय व्यवस्था स्थापित करता चाहते थे, जिसमें सहयोगी संघवाद की धारणा के आधार पर केन्द्र तथा राज्य में सदभावनापूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो सके। प्रशासनिक एकरूपता व राष्ट्रीय एकता के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके और उनके द्वारा राज्यपाल के पद की व्यवस्था इस लक्ष्य की पूर्ति के साधन के रूप में की गई है। के0एम0 मुंशी ने कहा कि राज्यपाल संवैधानिक औचित्य का प्रहरी और वह कड़ी है जो राज्य को केन्द्र के साथ जोड़ते हुए भारत की एकता के लक्ष्य को प्राप्त करती है।

केन्द्रीय शासन के प्रतिनिधि के रूप में निम्न कार्य किये जाते है :–

1. भारतीय संविधान के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकार के बीच सदुभावनापूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने की आवश्यकता पर बल दिया गया और अनुच्छेद 256, 257 व 258 में इसी बात को कहा गया है। केन्द्र सरकार के द्वारा राज्य सरकारों को इन अनुच्छेदो के अन्तर्गत निर्देश–आदेश राज्यपाल के माध्यम से ही दिये जाते है और राज्यपाल का यह कर्तव्य है कि वह यह देखे कि राज्य सरकार इन निर्देशों–आदेशों की पालना कर रही है या नहीं। यदि राज्य का मंत्रीमण्डल राज्यपाल को राष्ट्रपति के

निर्देशों के विरूद्ध कार्य करने की सलाह देता है तो वह इस प्रकार की सलाह को अस्वीकार कर सकता है और राज्य सरकारों को राष्ट्रपति के निर्देश मानने के लिए बाध्य कर सकता है। यदि राज्य मंत्रीमण्डल केन्द्रीय सरकार के निर्देशानुसार कार्य नहीं करता है तो राज्यपाल मंत्रिमण्डल को चेतावनी दे सकता है तथा इसे संविधान के विरूद्ध मानकर अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत राष्ट्रपति को संवैधानिक संकट की रिपोर्ट दे सकता है।

2. केन्द्रीय सरकार के प्रतिनिधि के रूप में राज्यपाल का एक महत्वपूर्ण कार्य राज्य के प्रशासन के सम्बन्ध में समय–समय पर राष्ट्रपति को प्रतिवेदन भेजना है, जिसमें उसके द्वारा अपनी ओर से सुझाव भी दिये जाते है। राज्यपाल अपना पद ग्रहण करते समय संविधान की रक्षा करने की शपथ लेता है और इस दृष्टि से उनका सबसे प्रमुख कार्य यह देखना है कि राज्य सरकार संविधान के अनुसार कार्य कर रही है अथवा नहीं। राज्यपाल राष्ट्रपति को इस प्रकार का प्रतिवेदन स्वविवेक से ही भेजता है और इस सम्बन्ध में वह राज्य मंत्रीमण्डल की सलाह मानने के लिए बाध्य नहीं है। राष्ट्रपति शासन की स्थिति में राज्यपाल केन्द्रीय सरकार के प्रतिनिधि के रूप में राज्य के शासन का संचालन करता है।
3. अनुच्छेद 200 के अन्तर्गत राज्य विधानमण्डल द्वारा पारित किये गये किसी विधेयक को राज्यपाल राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए सुरक्षित रख सकता है। राज्यपाल इस सम्बन्ध में स्वविवेक से ही कार्य करता है।
4. अनुच्छेद 213 के अनुसार राज्यपाल को अध्यादेश जारी करने का अधिकार दिया गया है, किन्तु उसे कुछ विषयों के सम्बन्ध में अध्यादेश जारी करने से पूर्व राष्ट्रपति से स्वीकृति लेनी पड़ती है।

इनके अतिरिक्त राज्यपाल यह भी देखता है कि राज्य सरकार संकीर्ण प्रान्तीयतावाद को न अपनाकर समस्त संघ के हितो ध्यान में रखें।

केन्द्र के प्रतिनिधि के रूप में उसका दायित्व कहा प्रारम्भ होता है, इसका उत्तर देना कठिन है। वैसे तो यह दायित्व राष्ट्रपति शासन लागू होने पर ही प्रारम्भ होता है। परन्तु व्यवहार में यह सत्य सिद्ध नहीं हुआ है। राज्यपाल सांविधानिक अध्यक्ष के रूप में अपने कार्य को स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं कर सकता। क्योंकि उसने यदि अपनी शक्तियों का प्रयोग मनमाने ढंग से किया जो राष्ट्रपति उसे समयावधि पूर्व पदच्युत कर सकता है। राज्यपाल को राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त एवं पदच्युत किया जाना इस बात का प्रमाण है कि राज्यपाल को अपने दायित्वों को केन्द्र के प्रतिनिधि के रूप में निभाना पड़ता है। 19–20 मार्च, 1976 के राज्यपाल सम्मेलन में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा था कि ''संकीर्ण प्रान्तीयतावाद पर विजय प्राप्त करने में राज्यपाल की भूमिका महत्वपूर्ण है।''

विशेष परिस्थितिवश जब केन्द्र व राज्यों में अलग–अलग राजनीतिक दलों की सरकार हो तो राज्यपाल की द्वितीय भूमिका अधिक उभर कर आती है। विवाद की स्थिति में राज्यपाल ने केन्द्र की प्रतिनिधि के रूप में अपनी भूमिका को अधिक महत्व दिया है और इसी कारण वह अधिक विवाद का विषय बना है, इस तथ्य ने संघीय व्यवस्था को प्रभावित किया है क्योंकि राज्यपाल के माध्यम से केन्द्र राज्य के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करता है, जो स्वस्थ संघीय भावना का परिचायक नहीं है।

राज्यपाल की स्थिति को स्पष्ट करते हुए के0बी0 राव इस सम्बन्ध में लिखते है, आज जैसी उसकी स्थिति है, उसे केन्द्र द्वारा नियुक्त व पदच्युत किया जाता है। उसकी भूमिका पर निर्भर है जो पीछे बैठा व्यक्ति अपनी डोरियों से कर रहा है।'' केन्द्र सरकार के प्रतिपक्षी दलों की सरकारें सामान्यतया इस बात की शिकायत करती रही है कि केन्द्र का शासक दल राज्यपाल पद का प्रयोग अपने राजनीतिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए करता है। ऐसा अनेक उदाहरणों से स्पष्ट है।

उपरोक्त स्थितियां न तो राज्यपाल पद के हित में और न ही भारतीय संघीय व्यवस्था के हित में। आवश्यकता इस बात की है कि राज्यपाल के प्रतिनिधि के रूप में भूमिका और राज्य के संवैधानिक प्रधान के रूप में भूमिका में सामंजस्य स्थापित किया जाय। राज्यपाल पदधारी व्यक्ति को दोनों सरकारों का विश्वास प्राप्त होना ही चाहिऐ।

आवश्यकता इस बात की है कि दोनों भूमिकाओं में सामजस्य स्थापित किया जाय, इसी बात से संघीय व्यवस्था सशक्त व सुदृढ हो सकेगी। वस्तुतः संविधान के अनुच्छेद 174 के अनुसार राज्यपाल के कर्तव्य इस प्रकार के है कि वह केन्द्र के प्रतिनिधि व संविधन के संरक्षक के रूप में कार्य कर सकती है।

संविधान में राज्यपाल को विस्तृत रूप से यह अधिकार दिया है कि वह राज्य विधानसभा से पारित किसी भी विधेयक को राष्ट्रपति के विचारार्थ रक्षित कर सकता है। संविधान के द्वारा उसे यह शक्ति इसलिए प्रदान की गई है कि केन्द्र व राज्यों में विधायी क्षेत्र में कोई विवाद उत्पन्न न हो, विशेष रूप से समवर्ती सूची के क्षेत्र में।

इस सम्बन्ध में विचारणीय प्रश्न यह है कि किसी विधेयक को स्वीकृति प्रदान नहीं करने तथा राष्ट्रपति के विचारार्थ रक्षित रखने में राज्यपाल का राज्य मन्त्रिमण्डल की सलाह के विरूद्ध जाना कहां तकक न्यायोचित है ? संविधान के किसी भी अनुच्छेद में यह नहीं लिखा गया है कि राज्यपाल मन्त्रिमण्डल की सलाह से बाध्य होगा। इस सम्बन्ध में राज्यपालों द्वारा अलग–अलग तरह से कार्य किया है। दुर्गादास बसु ने लिखा है कि ''राज्यपाल का किसी भी विधेयक को विशेष परिस्थतियों में मन्त्रिमण्डल की इच्छा के विरूद्ध रक्षित करना कहां तक न्यायोचित है, यदि वह यह समझे कि उक्त विधेयक संविधान की धाराओं के विपरीत तथा केन्द्रीय सरकार के अधिकारों का उल्लंघन करता है।

राज्यपाल स्वतन्त्र है या राष्ट्रपति का अभिकर्ता

भारत के अधिकांश राज्यपालों ने राष्ट्रपति के अभिकर्ता के रूप में कार्य करना अधिक पसन्द किया है। केन्दीय इच्छा को अधिक सम्मान दिया है, राज्यपालों का एक ऐसा वर्ग भी है जिन्होंने संविधान कीआत्मा के

अनुसार कार्य कर मुख्यमन्त्रियों की सलाह का आदर किया है। तमिलनाडु, कर्नाटक, पश्चिमी बंगाल तथा पंजाब के राज्यपालों ने अपने राज्य के मुख्यमंत्रियों द्वारा भाषणों को विधानसभा में पढ़ा, जिसमें केन्द्र पर अनेक प्रकार के आरोप लगाये गये। 20 जनवरी, 1970 को तमिलनाडू के राज्यपाल उज्जवल सिंह ने 5वें वित्त आयोग की सिफारिशों पर निराशा व्यक्त की।

हरिविष्णु कामथ ने इस सम्बन्ध में कहा था ''राज्यपाल एक ऐसी कठपुतली है, जिसे एक ओर मुख्यमंत्री और दूसरीओर प्रधानमंत्री नचा रहा होता है। राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति करता है, उसको राष्ट्रपति की आंख और कान कहा जाता है। डा0 अम्बेडकर ने राज्यपाल के कृत्यों का स्पष्टीकरण करते हुए कहा कि राज्य सरकारों को केन्द्रीय सरकार की मातहती में काम करना है।

केन्द्र–राज्य सम्बन्धों में राज्यपाल की भूमिका

राज्यपाल संघ–राज्य सम्बन्धों को विनयमित करने का माध्यम है। केन्द्र व राज्य के मध्य तनाव की स्थिति में राज्यपाल मध्यस्थ के कार्य को सही रूप से निभा सकता है। राज्यों के मन्त्रीमण्डल यह जानते है कि वे राज्यपाल के माध्यम से अधिक केन्द्रीय सहायता प्राप्त कर सकते है और केन्द्रीय सरकार अपने अभिकर्ता की मांगो पर अधिक ध्यान देगी। प्रो0 के0वी0 राय ने लिखा है कि ''राज्यपाल वही है जो केन्द्र उसे बनाना चाहता है, व्यवहारिक सक्रिय भूमिका निभाने की स्थिति में तो इसका कारण यह है कि उसमें केन्द्र की मौन सम्मति है या केन्द्र का निर्देशन।

वस्तुतः भारतीय संघ व्यवस्था में राज्यपाल का पद केन्द्रीय संस्था है, केन्द्र व राज्य को जोड़ने वाली कड़ी है। अतः केन्द्रीय सरकार को इसे अपने निहित राजनीतिक स्वार्थो की पूर्ति का अभिकरण नहीं मानना चाहिए, अपितु इसे केन्द्र तथा राज्य सम्बन्धों को मधुर बनाने वाले पद के रूप में विकसित करना चाहिए।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 154(1) के अनुसार ''राज्य की कार्यकारी शक्ति राज्यपाल में निहित बताई गई है। न्यायालय ने कार्यकारी शक्ति का तात्पर्य सरकार के वे अवशिष्ट कार्य जो विधायी और न्यायिक कार्यो के अलग किये जाने पर शेष रहते हे, के रूप में की है। राज्यपाल की स्वविवेकीय शक्तियां न्यायिक पुनरावलोकन अथवा विधायी क्षमता से बाहर रखी गई है। यह शक्तियां राज्यपाल व भारतीय राष्ट्रपति की स्थिति के मध्य एक बड़ा अन्तर ला देती है। यदि राज्यपाल के स्वविवेक के प्रयोग को लेकर कोई प्रश्न उठता है तो राज्यपाल का निर्णय ही इस विषय में अन्तिम होगा, और कोई कार्य स्वविवेक के अन्तर्गत आता है या नहीं, और उसके ऐसे किसी कार्य की वैधता पर प्रश्न नहीं किया जा सकता। यह स्पष्ट है कि राज्य के प्रमुख भूमिका में राज्यपाल स्वविवेक पर आधारित अनेक कार्य करता है। यह स्वनिर्णय का अधिकार सामान्य प्रकृति का है, और इसका प्रयोग राज्य की विशिष्ट परिस्थति व सन्दर्भ पर निर्भर करता है। एम0वी0 पायली का सुझाव है कि राज्यपाल का स्वनिर्णय का अधिकार संविधान के कार्यान्वयन वर्षो में विकसित परम्पराओं से निर्देशित होना चाहिए।

राज्यपालों द्वारा किये गये कार्यो को सामान्यतया दलीय पक्षपात के रूप में भी देखा जाता है। प्रायः सभी मामलों में केन्द्र सरकार के उपकरणों और शासक दल के व्यक्तियों को ही राज्यपाल नियुक्त किया गया। जिस तरह से राज्यपाल पद का प्रयोग केन्द्र द्वारा अपनी पसन्द के मन्त्रिमण्डलों को सत्ता में लाने के लिए किया गया है, वह सुनिश्चित संघीय परम्परा का उल्लंघन है।

संविधान लागू होने के वर्ष 1950 से वर्तमान तक राज्यपाल के पद का प्रकार्यात्मक अध्ययन करने पर हम पाते है कि अधिकांशतः राज्यपालों के सक्रिय राजनीति में भाग लेने के कारण ही यह पद विवाद का विषय बनता रहा है।

राज्यपाल के पद का लक्ष्य राष्ट्र की एकता को बनाये रखना है और राज्य के विकास व अन्य गतिविधियों के विषय में केन्द्र को सूचित रखना है। राज्यपाल का पद एक उत्तरदायित्वपूर्ण पद है। समसामयिक सन्दर्भ में पद की गरिमा का पतन हुआ है। केन्द्र द्वारा राज्यों को निमन्त्रण की बजाय आदेशपूर्वक बुलवाया जाता है। वे अपने क्षेत्राधिकार के छोटे–छोटे निर्णयों के लिए भी केन्द्र पर निर्भर करते है। केन्द्र द्वारा उन्हें परामर्श नहीं, अपितु आदेश दिये जाते है, इसका केन्द्र नियुक्ति पदाधिकारी की प्रकृति है यदि राज्य प्रमुख को केन्द्र सरकार आदेश दे तो यह संघीय प्रावधान का सरासर उल्लंघन माना जा सकता है। राज्यपाल के दोहरे स्वरूप के कारण बहुत से विवाद उठे जिनका कोई संतोषजनक उत्तर अभी तक नहीं मिल पाया है। राज्यपालों की एक समिति इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिए बनाई गई थी, परन्तु उसकी सिफारिशों से विवेकी शक्तियों को बल मिलता है। स्वस्थ लोकतान्त्रिक परम्पराओं को नहीं। राजमन्नार समिति जो अन्नद्रमुक सरकार ने गठित की थी, उसके सुझावों से यह पद लगभग निर्जीव सा हो जाता है। इस समिति का प्रतिवेदन केन्द्र के गले नहीं उतरा। इस स्थिति में सम्बन्धित विवाद निम्नलिखित है :–

प्रथमतः राज्यपाल पद से सम्बन्धित जो दोहरे उत्तरदायित्व है, वे आसानी से एक–दूसरे से पृथक नहीं किये जा सकते। ऐसा लगता है कि वे एक–दूसरे का उल्लंघन करते है, और इसी कारण राज्यपाल द्वारा उस शक्ति के दुरूपयोग की संभावना बनती है।

राज्यपाल प्रमुखतः एक संवैधानिक अध्यक्ष है, और उसे संसदीय शासन के स्वीकृत मानदण्डों के अनुरूप कार्य करके संतुष्ट हो जाना चाहिए। वैजहॉट की गृहित शब्दावली में यह कहा जा सकता है कि यद्यपि उसे तीन अधिकारों के प्रयोग की स्वतन्त्रता है, लेकिन विश्लेषण की अन्तिम स्थिति में उसे मन्त्रिपरिषद की सलाह के अनुरूप ही कार्य करना चाहिए।

राज्यपाल की पद की भूमिका का विशिष्टीकरण

यह तर्क दिया सकता है कि केन्द्र का एजेन्ट प्रयोग अधिक उपयुक्त नहीं है, क्योंकि यह संघ विरोधी न होते हुए भी असंघीय स्थिति का तो परिचायक है ही। अधिक उपयुक्ततः यह कहां जा सकता है कि राज्यपाल के दो प्रकार के कर्तव्य है– एक राज्य का अध्यक्ष होने के

कारण उसके दायित्व और दूसरे केन्द्र की तुलना में राज्यपाल की राज्य के संवैधानिक अध्यक्ष की भूमिका प्रधान हे क्योंकि प्रथम स्थिति का सम्बन्ध राज्य की सामान्य परिस्थतियों से है तथा आपालकालीन स्थितियां वहां से शुरू होती है, जहां सामान्य स्थिति समाप्त होती है। यदि ये दोनों आधार स्वीकार कर लिये जाते है तो दोनों भूमिकाओं से सहज सामजंस्य स्थापित किया जाता सकाता है।

अनेक विचार गोष्ठियों, सेमिनारों और समितियों के द्वारा निरन्तर इस तथ्य पर समीक्षा की जाती रही है कि राज्यपाल के पद के दुरूपयोग, अनुच्छेद 356 एवं विधायिकाओं के निलम्बन के मामलों पर मनमानी एवं राज्यपाल की भूमिका, नियुक्ति, निष्पक्षता के बारे में भी निरन्तर सुझाव आते रहे है एवं राज्यपालों की वर्तमान कार्य प्रणाली भी निरन्तर आलोचना का विषय बनती रही है।

संविधान की वास्तविक कार्यविधि संविधान में वर्णित बातों के समरूप हीं होती। सभी प्रकार की राजनीतिक, आर्थिक व सामाजिक शक्तियां उसकी कार्य विधि से टकराती है, और संवैधानिक व्यवस्थाओं व व्यवहार में उनके प्रभाव होते है। शक्ति व अधिकारों के प्रयोग की विकृतियां निर्धारित ढांचे को प्रहारित करती है। अतः सर्वाधिक महतव इस बात का है कि केन्द्र व राज्य अपने अधिकारों के प्रयोग में कितने विवेकी है, और उनके दायित्व निर्वाह एवं निष्पक्ष व्यवहार का स्तर क्या है ?

सशक्त केन्द्र के साथ संशक्त राज्य भी चाहिए, होनों ही स्तरों की राजव्यवस्था सशक्त, सबल व परिमाणदायक होनी चाहिए। प्रश्न अधिकारों के विभाजन और उनमें बढ़त घटत करने की तथा दोनों के मध्य शक्तिमतता और सक्षमता के मध्य संतुलन स्थापित करने के साथ ही दायित्व निर्वाह व अधिकार प्रयोग की प्रमाणिकता का एवं सत्ताधिकार के प्रयोग की संहिता व औचित्य का प्रश्न भी है। आज सम्बन्धों का जो संकट उत्पन्न हुआ है, उसका कारण अधिकारों के दुरूपयोग की बढ़ती हुई प्रवृति है जो राज्यों में जन निर्वाचित एवं बहुमत के समर्थन की धनी विरोधी सरकारों का उखाड़ने तथा मनमाने ढंग से राष्ट्रपति शासन स्थापित करने में केन्द्र की भूमिका अधिकारों के दुरूपयोग कर रही है। इन सबसे केन्द्र व राज्यों में तनाव उत्पन्न होता है, जिससे संघ व्यवस्था प्रभावित होती है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

एम0वी0 पयली : ''कान्स्टीट्यूशनल गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, एशिया पबिलशिंग हाउस, 1968'' पृ0 449

धैय एम0एस0 : ''ऑफिस ऑफ दी गर्वनर इन इण्डिया'' ए क्रिटिकल कमेन्ट्री'' (संदीप प्रकाशन, देहली, 1979) पृ0 33

जी0एन0 सिंह : ''दी रोल ऑफ स्टेट गवर्नर इन इण्डिया टुडे, इलाहबाद, किताब महल 1968'', पृ0 17

के0वी0 राव, जे0सी0 जौहरी : इण्डियन गवर्नमेन्ट एण्ड पॉलिटिक्स (विशाल पब्लि.)

एन0एस0 गहलोत : दी ऑफिस ऑफ दी गर्वनर इट्स कान्स्टीट्यूशनल इमेज एण्ड रियलिटी, (चुंग पब्लि., इलाहबाद, 1977)

डा0 जे0आर0 सिवाच : राज्यपाल का पद'' हरियाणा हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, चण्डीगढ़, 1979

दुर्गादास बसुः भारत का संविधान एक परिचय, वाधवा एण्ड कम्पनी, नागपुर, 2000

सरकारिया कमीशन ऑफ सेन्टर–स्टेट रिलेशन रिपोर्ट, भाग–1

दैनिक भास्कर संपादकीय, 24.06.2014

Alpheus Todd : On the Position of a Constituational Governer Under Responsible Government, Palala Press, 2016

Dubey Anil : Presidential Takeover of State Government, Universal Law Publishing, 2017

M.P. Singh : Outlines of Indian Legal and Constituational History, Universal Law Publishing, 2017

V.K. Singh : Governance and the Governer, Rawat Publication, Jaipur, 2018